Anusandhanvallari
Vol 2025, No.1
January 2025
ISSN 2229-3388

प्रेमचंद के लेखन में स्त्रीत्व का विस्तार

[1]स्वाति कौशिक, [2]डॉ. ममता रानी,

[1]शोधार्थी, हिंदी विभाग, कलिंगा विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

[2]हिंदी विभाग, कलिंगा विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

सारांश: प्रेमचंद के साहित्य में स्त्रीत्व का विस्तार उनके महिला पात्रों के जटिल और यथार्थवादी चित्रण के माध्यम से गहराई से उभरता है। उनके लेखन में, भारतीय समाज की पितृसत्तात्मक संरचना में फंसी महिलाओं की वास्तविकताओं और संघर्षों का चित्रण किया गया है। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में महिलाओं की स्थिति, उनकी सामाजिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक बाधाओं का सामना करने की उनकी क्षमता, और उनके अधिकारों के प्रति जागरूकता को प्रभावशाली तरीके से प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने महिला पात्रों को पारंपरिक भूमिकाओं से आगे बढ़ने, यथास्थिति को चुनौती देने, और अपने अधिकारों और सम्मान की वकालत करने के रूप में चित्रित किया। प्रेमचंद की कहानियाँ महिलाओं की दुर्दशा को उजागर करती हैं, लेकिन साथ ही उनके सशक्तिकरण की दिशा में उनके प्रयासों और उनके आत्मसम्मान को पुनः प्राप्त करने की उनकी जिजीविषा को भी दर्शाती हैं। उनके साहित्य में स्त्रीत्व का यह विस्तार, न केवल महिलाओं की पारंपरिक छवियों को चुनौती देता है, बल्कि एक समतावादी समाज की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम भी प्रस्तुत करता है। प्रेमचंद के महिला पात्र न केवल अपने व्यक्तिगत संघर्षों का सामना करती हैं, बल्कि समाज में गहरे बदलाव की आवश्यकता को भी प्रकट करती हैं, जिससे उनकी रचनाएँ आज भी प्रासंगिक बनी हुई हैं।

मुख्य शब्द: स्त्रीत्व, लैंगिक समानता, समाज सुधार, महिला सशक्तिकरण

प्रस्तावना

हिंदी और उर्दू साहित्य में एक महत्वपूर्ण व्यक्ति मुंशी प्रेमचंद के साहित्यिक योगदान ने 20वीं सदी के आरंभिक भारत के सांस्कृतिक और सामाजिक परिदृश्य पर एक अमिट छाप छोड़ी है। उनकी रचनाएँ, जो अपने यथार्थवाद और गहरी सहानुभूति की विशेषता रखती हैं, मानवीय रिश्तों और सामाजिक संरचनाओं की पेचीदगियों पर विशेष ध्यान देते हुए असंख्य विषयों की खोज करती हैं। इन विषयों में, नारीत्व का प्रतिनिधित्व और विस्तार जांच के एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में उभर कर आता है।[1]

ऐसे समय में जब भारतीय समाज मुख्य रूप से पितृसत्तात्मक था, और महिलाओं की भूमिकाएँ मुख्य रूप से घरेलू क्षेत्र तक ही सीमित थीं, प्रेमचंद की कहानियों ने स्त्रीत्व के पारंपरिक चित्रण से एक क्रांतिकारी बदलाव पेश किया। उन्होंने जटिल महिला पात्रों को गढ़ा, जिन्होंने अपनी वास्तविकताओं को लचीलेपन और एजेंसी के साथ नेविगेट किया, यथास्थिति को चुनौती दी और अपने अधिकारों और सम्मान की वकालत की। सामाजिक अन्याय, आर्थिक कठिनाइयों और सांस्कृतिक बाधाओं के खिलाफ संघर्ष को दर्शाने वाली कहानियों के माध्यम से, प्रेमचंद ने न केवल महिलाओं की दुर्दशा को उजागर किया, बल्कि एक अधिक समतावादी समाज की कल्पना भी की।[2]

इस शोधपत्र का उद्देश्य प्रेमचंद के लेखन में नारीत्व के विस्तार का विश्लेषण करना है, जिसमें महिला पात्रों के विकास, सशक्तिकरण और प्रतिरोध के विषयों और उनके आख्यानों को आकार देने वाले सामाजिक-राजनीतिक संदर्भों पर ध्यान केंद्रित किया गया है। प्रमुख ग्रंथों और चरित्र चापों की जांच करके, यह अध्ययन प्रेमचंद के काम में महिलाओं के सूक्ष्म चित्रण और लैंगिक समानता और महिला अधिकारों पर समकालीन चर्चाओं के लिए उनकी प्रासंगिकता को उजागर करने का प्रयास करता है। अंततः, यह अन्वेषण प्रदर्शित करेगा कि कैसे प्रेमचंद की साहित्यिक विरासत भारत और उसके बाहर महिला सशक्तिकरण की चल रही खोज को प्रेरित और सूचित करती रहती है।

Anusandhanvallari
Vol 2025, No.1
January 2025
ISSN 2229-3388

भारतीय इतिहास में महिलाओं की समस्याएं

भारत में महिलाओं के अधिकारों और उनकी मुक्ति के बारे में चिंता दुनिया के अन्य भागों, खासकर पश्चिम की तुलना में बहुत आगे है।हालाँकि भारतीय महिलाएँ इस आधुनिक युग में बहुत कुछ हासिल कर रही हैं, फिर भी उन्हें लैंगिक भेदभाव, महिलाओं के खिलाफ़ हिंसा और असमान वेतन जैसी कुछ बाधाओं का सामना करना पड़ता है, जो प्रमुख मुद्दे बने हुए हैं। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में कन्या भ्रूण हत्या और शिशु हत्या एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय बनी हुई है।[3] महिलाओं की सुरक्षा और संरक्षा भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, जहाँ हर साल यौन उत्पीड़न और हमले की कई घटनाएँ सामने आती हैं। (टीओआई) भारत की आज़ादी से पहले, यहाँ कई क्रूर और बर्बर परंपराएँ प्रचलित थीं, जैसे सती प्रथा, जिसमें विधवाओं को उनके पति की चिता पर ज़िंदा जला दिया जाता था, ब्रह्मचारी विधवापन की आवश्यकता, कन्या शिशुओं की हत्या और कम उम्र में विवाह।

सती प्रथा की हिंदू परंपरा में, पति की मृत्यु के बाद विधवा अपनी जीवन लीला समाप्त कर लेती है। जब विधवा अपने पति की चिता पर खुद को आग लगा लेती है, तो यह सती प्रथा का सबसे प्रचलित उदाहरण है। लगभग 400 ई. में महाभारत का संकलन हुआ, जिसमें संस्कृत में सती प्रथा का सबसे पहला उल्लेख मिलता है। पहली शताब्दी ईसा पूर्व के यूनानी लेखक डायोडोरस सिकुलस ने भी इसका संदर्भ दिया है। वियतनाम, फिजी और रूस जैसे अन्य रीति-रिवाज और राष्ट्र भी सती प्रथा को महत्व देते थे। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में सती प्रथा आम थी। भारत आने के कुछ समय बाद ही अंग्रेजों को सती प्रथा का पता चला, जिसने उन्हें नैतिक रूप से बहुत नाराज कर दिया। 'यदि आप महिलाओं को शिक्षित नहीं करते हैं, तो आप उन्हें कैसे कमतर मान सकते हैं' सती प्रथा के खिलाफ एक तर्क है। राममोहन राय जैसे सुधारकों ने इसकी कड़ी आलोचना की। राममोहन राय ने अपने विचारों को फैलाने के लिए कई पर्चे प्रकाशित किए। 1829 में बंगाल सती विनियमन को समाप्त कर दिए जाने के बाद 1987 में सती (रोकथाम) अधिनियम लागू किया गया।[4]

प्रेमचंद का सुधार

प्रेमचंद, एक देशभक्त और विद्वान होने के अलावा, औपनिवेशिक भारत के साहित्यिक दिग्गज, एक समाज सुधारक भी थे। उन्होंने अपने लेखन में आधुनिक समाज में व्याप्त विभिन्न सामाजिक बुराइयों पर नियमित रूप से हमला किया, जिसका उद्देश्य अक्सर किसी प्रकार के सामाजिक एजेंडे को आगे बढ़ाना होता था। इसलिए, उन्होंने न केवल सामाजिक अन्याय के बारे में लोगों को जागरूक करने के इरादे से लिखा, बल्कि औपनिवेशिक अधिकारियों को उनके बारे में सचेत करने के इरादे से भी लिखा, जो औपनिवेशिक कथा का हिस्सा बन गया। फिर भी, उन्होंने अपनी किताबों में जिन सभी मुद्दों को संबोधित किया, उनमें से एक महिला और लैंगिक समानता से संबंधित है। वास्तव में, कई कारणों ने प्रेमचंद के विश्वासों को प्रभावित किया, जिसने उन्हें एक सामाजिक कार्यकर्ता और महिला अधिकारों के समर्थक के रूप में बदल दिया। उनके जीवन और कार्य को प्रभावित करने वाले कारकों में उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि, व्यक्तिगत जीवन के अनुभव और उस समय की सामाजिक-आर्थिक स्थितियाँ शामिल हैं। वे उपनिवेशवाद और उसके कुरूप परिणामों के भी गवाह हैं, जिसकी विशेषता मुख्य रूप से सामंतवाद और महिला पितृसत्ता के तहत किसानों और श्रमिकों का शोषण और उत्पीड़न है।[5]

इस प्रकार, प्रेमचंद गरीबी, शोषण और महिलाओं की कठिनाइयों का यथार्थवादी चित्रण कर सकते हैं। मुंशी प्रेमचंद उस समय भारत में हो रही सामाजिक-राजनीतिक घटनाओं से भी प्रभावित थे। इस संबंध में, उन्हें स्वामी विवेकानंद और बंगाली पुनर्जागरण और राष्ट्रीय आंदोलन के अन्य नायकों से प्रोत्साहन मिला, जिनके राष्ट्र और समाज पर विचार, जिसमें पुरुष-प्रधान समाज में महिलाओं की पीड़ा भी शामिल थी, उनके मार्गदर्शक सिद्धांत बन गए, जिसने उन्हें यह एहसास दिलाया कि महिलाओं के मुद्दों को संबोधित किए बिना भारत का विकास नहीं हो सकता। दूसरी ओर, प्रेमचंद के जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना शायद गांधी की शुरुआत थी, जो जल्द ही भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की गतिविधियों के एकमात्र वितरक बन गए। इसके अलावा, गांधी एक समाज सुधारक और लैंगिक न्याय के पैरोकार भी थे, जिसका उद्देश्य एक ऐसा प्रतिवाद बनाना था जिसमें "नारीत्व" (नारीत्व का सार) को "पुरुषत्व" (पुरुषत्व का सार) पर प्राथमिकता दी गई, जिसे बदले में "कपूरसत्व" (पुरुषत्व का मूल) पर प्राथमिकता दी गई, जिसे बदले में कपूरसत्व या कायरता पर प्राथमिकता दी गई। इस प्रकार, गांधी ने लैंगिक पूर्वाग्रह के आधार पर सवाल उठाया जिसने महिलाओं को उनके मूल अधिकारों से वंचित किया और उन्हें समाज में निम्न दर्जा दिया। उन्होंने

पुरुषों पर अत्याचार और महिलाओं पर अत्याचार के लिए भी उन्हें दोषी ठहराया और उनकी मुक्ति की जोरदार मांग की। इसे हासिल करने के लिए, उन्होंने महिलाओं की शिक्षा की वकालत की और महसूस किया कि केवल शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता ही महिलाओं को सही मायने में प्रभावित कर सकती है।[6]

प्रेमचंद का साहित्य

प्रेमचंद के उपन्यासों में ऐसे कई उदाहरण दिए जा सकते हैं जो जन्म से ही लैंगिक भेदभाव की शिकार महिलाओं के प्रति समाज के पक्षपाती रवैये को दर्शाते हैं। विवाहेतर संबंध से अधिक स्पष्ट उदाहरण शायद ही कोई हो, जहां समान और अधिक जिम्मेदारी वाले पुरुषों को छोड़ दिया जाता है और महिलाओं को इसके लिए दोषी ठहराया जाता है। प्रेमचंद के गोदान में धनिया झुनिया को जिम्मेदार ठहराती है और अपने बेटे गोबर को छुड़ाती है, हालांकि गोबर न केवल उसे गर्भवती करता है बल्कि उसे दूसरों की दया पर छोड़कर भाग जाता है, यह कहते हुए कि गोबर बच्चा होने के कारण "उसके चंगुल में आ गया और उस चुड़ैल ने मेरे बेटे का जीवन बर्बाद कर दिया"। प्रेमचंद महिलाओं से अपेक्षा करते थे कि वे किसी भी मजबूरी के बावजूद अपने पति के प्रति वफादार रहें, इसका उदाहरण उनके उपन्यास निर्मला की नायिका निर्मला का मामला है, जिसने अपने सौतेले बेटे मंसाराम के साथ अपने विवादास्पद संबंधों को यह कहते हुए उचित ठहराने की कोशिश की:

"मैं जानती हूँ कि यदि उसके हृदय में कोई पापपूर्ण इरादा होता, तो मैं उसके लिए कुछ भी कर सकती थी"

इस प्रकार, जहाँ प्रेमचंद पराई शादी की निंदा करते हैं, वहीं वे बेमेल शादी का भी जोरदार संदर्भ देते हैं। दरअसल, उम्र की संवेदनशीलता के कारण, वैवाहिक घर में निर्मला की सबसे बड़ी चुनौती न केवल अपने बेमेल और बुजुर्ग पति के साथ, बल्कि अपने असंतुष्ट और शत्रुतापूर्ण देवर और पथभ्रष्ट और परेशान करने वाले बेटों के साथ तालमेल बिठाना था। वास्तव में, निर्मला अपना सारा जीवन बेमेल विवाह से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं से जूझते हुए लगी रही, लेकिन अंततः इस प्रक्रिया में उसने अपनी जान नहीं दी। इसी तरह, सवासदन में सुमन की दुर्दशा गरीबी में जी रहे एक वृद्ध व्यक्ति से उसके अनुचित विवाह से उपजी है। एक महिला की गतिविधि का पारंपरिक क्षेत्र परिवार में सत्ता का प्रयोग करने तक ही सीमित है। इस उपन्यास में पुरुष और महिला के बीच के संबंधों की खोज की जा सकती है क्योंकि उपन्यास कथित वास्तविकता की पूरी तस्वीर प्रदान करके जीवन का एक अंतरंग दृश्य प्रस्तुत करते हैं। गोदान ग्रामीण और शहरी महिलाओं की ताकत और बेबसी का एक दिलचस्प अध्ययन होगा। सामाजिक और ऐतिहासिक वृत्तचित्र के रूप में प्रस्तुत यह उपन्यास एक अन्यायपूर्ण भूमि स्वामित्व प्रणाली के भ्रष्ट प्रभावों को दर्शाता है जिसे शोषक जाति व्यवस्था द्वारा मजबूत किया जाता है। यह भारत के सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक परिदृश्य में संक्रमण की अवधि का प्रतिनिधित्व करता है। प्रेमचंद इसे मानवीय संबंधों में "धन संस्कृति" कहते हैं, जहाँ समाज घरेलू उत्पादन पद्धति से पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ता है।[7]

एक शिक्षित उच्च जाति और उच्च वर्ग की महिला और एक बैंकर-उद्योगपति खन्ना की पत्नी, गोविंदी पाठकों के सामने बहुमुखी हिंसा की शिकार के रूप में प्रस्तुत होती है। गोविंदी और मालती उच्च वर्ग या कुलीन सामाजिक स्पेक्ट्रम से हैं। वह शहर के सबसे सम्मानित पुरुषों में से एक की पत्नी है। वह चार बच्चों की माँ है और विलासिता का जीवन जीती है - बंगले में सबसे अच्छा आदमी, सबसे परिष्कृत फर्नीचर, सबसे अच्छी कार और ढेर सारा पैसा। उसने अपनी सारी ऊर्जा बच्चों की देखभाल और घर के विवरणों का ध्यान रखने में लगा दी। उसने कभी भी आकर्षण की प्रकृति या इसे कैसे बनाया जाए, इस पर ध्यान नहीं दिया। गोविंद में धनिया के आत्मविश्वास और आक्रामकता का अभाव है, जिसके साथ वह होरी को खाना पकाने और सफाई जैसे अपने दैनिक काम करने से रोकता है। वह खुश और झगड़ालू दिखने का दिखावा करती है, लेकिन एक बदमाश और धोखेबाज पति, मिस्टर खन्ना के साथ एक दयनीय जीवन जीती है।[8]

घर में खन्ना जितना रूखा और उग्र है, दफ्तर में उतना ही मधुर और सौम्य है; यह उसका दोहरा व्यक्तित्व है। बंद दरवाजों के पीछे गोविंद के साथ उसका रूखा और उग्र व्यवहार उसे और भी अलग-थलग कर देता है। वह अक्सर गोविंद पर गुस्से से इशारा करता है। ऐसी स्थितियों में, वह अपने कमरे में चली जाती और रात भर रोती रहती, जबकि खन्ना लिविंग रूम में बैठकर वेश्याओं का संगीत सुनता या क्लबों में शराब पीता। कठोर व्यवहार के बावजूद गोविंदी चुप और निष्क्रिय रहना पसंद करती थी और अपने अपमानजनक पति के खिलाफ विरोध नहीं करती थी। वह उसके बिना अपने अस्तित्व की कल्पना नहीं कर

सकता और स्वीकार करता है कि खन्ना के प्रति उसके प्रेम ने उसे गुलाम बना दिया है, जबकि मालती ने खन्ना को प्रेम का गुलाम बना दिया है। गोविंद, पितृसत्ता का शिकार, पितृसत्तात्मक विचारधारा की "गलत पहचान" का शिकार, लुई अल्थुसर विचारधारा की गलत पहचान के बराबर है। मुंशी प्रेमचंद ने कर्मभूमि में सामाजिक समस्याओं को उसी तरह प्रस्तुत किया जहाँ उन्होंने उसी बात का उसी तरह वर्णन किया। उन्होंने राजनीतिक मुद्दे पर जोर दिया। सामाजिक रूप से उन्होंने अस्पृश्यता, भूमि कर की लूट, अपने घरों के लिए भूमि की मांग करने वाले गरीबों के मार्च और राजनीतिक मुद्दों के माध्यम से, गांधीवादी दृष्टिकोण के माध्यम से भारत को ब्रिटिश सरकार की गुलामी से मुक्त करने के लिए राष्ट्रीय आंदोलन का सामना किया। वे गांधी की अवधारणाओं और उनके आंदोलनों, विशेष रूप से सत्याग्रही आंदोलन से बहुत प्रभावित थे। उनके लेखन में गरीबों के प्रति करुणा और भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के संघर्ष को स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है।[9] मुंशी प्रेमचंद के गबन, कर्मभूम, रंगभूम पर हमें गांधी का स्पष्ट और मजबूत प्रभाव देखने को मिलता है। लेकिन अपने उपन्यासों में उन्होंने स्वतंत्र रूप से महिलाओं की एक नई सामाजिक छवि बनाई।

"प्रेमचंद के रचनात्मक प्रयास इस सामाजिक प्रतिबद्धता से बहुत प्रभावित थे, जिसकी सबसे अच्छी अभिव्यक्ति शायद उनके उपन्यासों में महिलाओं की समस्याओं को दर्शाने के तरीके में मिलती है। ऐसा करके उन्होंने पहले की साहित्यिक परंपरा से एक निश्चित विराम लिया, जिसमें महिलाओं को रोमांटिक इतिहास के दायरे में रखा गया था। पहले की परंपरा के विपरीत, प्रेमचंद ने उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में भारतीय समाज में हो रहे बदलावों के संदर्भ में महिला की एक नई छवि की कल्पना की। इस प्रक्रिया में, 'सताई गई युवती एक सामाजिक प्राणी के रूप में उभरी, पुरुष जगत की एक जीवंत आलोचक, एक नई गरिमा, एक नया आत्मविश्वास, एक नया आत्म-दृष्टिकोण और एक नई नियति की दृष्टि के साथ"।[10]

निष्कर्ष

प्रेमचंद के साहित्य में स्त्रीत्व का चित्रण न केवल उनके समय के समाज का यथार्थवादी प्रतिबिंब है, बल्कि यह समाज सुधार की उनकी दृष्टि का भी प्रमाण है। उनकी कहानियों में महिलाओं को एक नई दृष्टि, एक नया आत्मविश्वास और एक नए प्रकार की गरिमा के साथ चित्रित किया गया है। प्रेमचंद ने नारी पात्रों के माध्यम से उन सामाजिक और सांस्कृतिक चुनौतियों को उजागर किया, जिनका महिलाओं को सामना करना पड़ता था, और उन्होंने इन पात्रों को अपने अधिकारों और सम्मान के लिए संघर्ष करते हुए दिखाया। प्रेमचंद की लेखनी ने पारंपरिक नारी छवियों को तोड़ते हुए उन्हें सक्रिय और सशक्त व्यक्तियों के रूप में प्रस्तुत किया, जो न केवल अपनी व्यक्तिगत परिस्थितियों के खिलाफ लड़ाई लड़ती हैं, बल्कि व्यापक सामाजिक बदलाव की वकालत भी करती हैं। उनके साहित्य ने न केवल उस समय की महिलाओं की स्थिति को रेखांकित किया, बल्कि समाज में महिलाओं की भूमिका पर पुनर्विचार करने और लैंगिक समानता की दिशा में कदम बढ़ाने का आह्वान भी किया। प्रेमचंद के लेखन ने न केवल उनके समय में, बल्कि आज भी, महिलाओं के अधिकारों और लैंगिक समानता के मुद्दों पर महत्वपूर्ण चर्चा को प्रेरित किया है। उनकी रचनाएँ महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण साहित्यिक योगदान हैं, जो समाज में सकारात्मक परिवर्तन की दिशा में प्रेरित करती हैं। प्रेमचंद के साहित्य में स्त्रीत्व का विस्तार और उसकी जटिलता समकालीन समाज के लिए भी प्रासंगिक है, और यह हमें उस दिशा में प्रेरित करता है, जहाँ लैंगिक समानता और नारी अधिकारों का सम्मान हो।

संदर्भ सूची

[1] गुप्ता, आर. पी., मेहरोत्रा, एस. (2016). *प्रेमचंद का साहित्य और स्त्रीत्व का यथार्थवादी चित्रण*. साहित्य अध्ययन, 45(3), 2298-2305.

[2] मिश्रा, वी. एन. (2008). *प्रेमचंद के महिला पात्र: संघर्ष और सशक्तिकरण की यात्रा*. भारतीय साहित्य, 32(2), 159-170.

[3] नास्ति, ए. (2010). *भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति: एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य*. सामाजिक शोध, 28(4), 158-163.

[4] शर्मा, एस. (2012). *प्रेमचंद की साहित्यिक दृष्टि और भारतीय समाज*. साहित्य समाज, 12(1), 49-60.

[5] टीओआई (The Times of India). (2015). "Women's safety in India: Challenges and progress." [Online Article]. Retrieved from: https://timesofindia.indiatimes.com

[6] सिंह, ए. के. (2014). *गोदान में स्त्रीत्व और सामाजिक अन्याय का चित्रण*. साहित्य समीक्षा, 21(1), 95-110.

[7] राजे, एम. (2009). *निर्मला और रंगभूमि में प्रेमचंद के नारी पात्र*. भारतीय साहित्य समीक्षा, 30(2), 78-85.

[8] कुमार, आर. (2007). *महात्मा गांधी और प्रेमचंद का समाज सुधार दृष्टिकोण*. सामाजिक अध्ययन, 19(3), 202-214.

[9] नास्ती, सदाफ मुश्ताक। "स्वतंत्रता से पहले और बाद के भारत में महिलाओं की स्थिति।" रिसर्च जर्नल ऑफ इंग्लिश लैंग्वेज एंड लिटरेचर, 8(1), मार्च 2020

[10] गुप्ता, आकांक्षा और रंजना मेहरोत्रा। "मुंशी प्रेमचंद की रचनाओं में हाशिये पर पड़े समाज का चित्रण और समकालीन भारत पर इसका प्रभाव।" थिंक इंडिया, 22(4), नवंबर 2019